THE TIMES OF INDIA

Date: 08-04-26

Ballot Points

SIR in Bengal has raised several questions, including for the spirit of electoral democracy

TOI Editorials

Two weeks to elections, around 27L people, as things stand, will not be able to vote in upcoming Bengal elections. This is unprecedented. And deeply worrying. Their status in the electorate is suspended, because processes that'll allow them to be on the new voter roll, being created through EC's Special Intensive Revision, have not been completed. The question is, how did the system get to this point?

The onus of proving eligibility was passed on to the voter. Because of the short timeframe of just five months to create a new electoral roll, the process was inevitably going to be challenging, chaotic and, in effect, unfair. Bengal is densely populated, with diverse communities, high rates of partial literacy, also hobbled by poor tech upgrades, and an uneven documentation culture. Which state-level documents, or residency papers, were legit for SIR has not been consistently determined – recall Aadhaar in Bihar. Bengali Muslims, Matuas, Nepalis, have all suffered. The breakdown in trust between TMC, the incumbent party in Bengal govt, and CEC, has meant a fractious rollout, vitiated exchanges. The Supreme Court stepped in to make the last-mile journey smoother. But that hasn't, exactly, worked out. Indian citizenshipis multi-layered. So, deciding on documents that prove citizenship needs thinking through, training and time. In election time, with tight deadlines, how can some tribunals be enough? That fully documented Bengalis have got excluded showed that, depending on a tech interface, which didn't even account for spelling variations, was an error. And, there's this robotic demand for "perfect" papers, in a highly unequal society. If the idea of Indian citizenship has hardened and narrowed, EC should have had a nationwide programme, conducted over a longish period, sensitising everyone, before embarking on SIR.

Most important, there's a principle involved here. Recall what jurisprudence says: better a hundred guilty persons go free, than one innocent getting convicted. The same applies to the fundamental right to vote. Let's assume a huge number, say, 25L, of those excluded in Bengal are found to be ineligible after a thorough check. That still leaves around 200,000 voters who will have lost their franchise. We can't dismiss that as a small proportion of voters. We have to recognise it's a big blow to the spirit of electoral democracy.

THE ECONOMIC TIMES

Date: 08-04-26

Go After the Big 'Uns, Let Minor Vices Go

Less legal clutter, better economic outcomes

ET Editorials

GoI's second wave of decriminalising minor offences, as reflected in the passage of Jan Vishwas (Amendment of Provisions) Bill last week, builds on the gains from the first round to improve ease of doing business. Replacing jail terms with fines for small infractions reduces the compliance burden on businesses while unclogging the judicial pipeline. There is a case to be made that freeing up capacity for productive activity improves both economic output and governance. India's experience bears out the theoretical underpinnings of a considerable overhaul of laws that can be as reformative as any big-ticket item of economic liberalisation.

As the PM has reiterated, there's a need for India to contemporise its body of laws, parts of which go back a couple of centuries and have fallen out of step with requirements of a modern economy. A rapidly growing economy like India's needs simple, effective and enforceable legislation. It must provide an effective regulatory environment for the new economy, and having a large overhang of unnecessary laws slows business. NDA has been consistent in its efforts to deliver more governance with less government. Rationalising its legislative archives is a core requirement in this endeavour.

Market forces work best in a lightly regulated environment. Since the economic liberalisation of the 1990s, large chunks of the economy have been deregulated, and the economy has been posting high rates of growth despite external shocks. Structurally, the economy has gained strength despite an unfinished economic reforms agenda. Decriminalisation across a wide array of laws does not run into the moral hazard of amnesty schemes that tend to penalise good behaviour. It merely adjusts the deterrence yardsticks for them to be more relevant. This makes it an obvious area of reform for governments serious about placing the economy on a higher growth trajectory. Paperwork aside, decriminalisation is a win-win situation for administrators and administered. Improved outcomes should now follow. Keep them going, GoI.

दैनिक भास्कर

Date: 08-04-26

चीन एनर्जी-संकट से क्यों नहीं जूझ रहा?

शेखर गुप्ता, (एडिटर-इन-चीफ, 'द प्रिन्ट')

एलपीजी और प्राकृतिक गैसों की कमी भारत में घरों से लेकर मझोले तथा लघु उद्योगों और खाद उत्पादन तक को जिस तरह से परेशान कर रही है, इसका जायजा लेते हुए मुझे उत्सुकता हुई कि चीन इतना शांत क्यों है।

नतीजा यह निकला कि उसने बुद्धिमानी बरती। चीन के पास भी हमारी तरह तेल और गैस का बड़ा भंडार नहीं है और वह भी इनका काफी आयात करता है। लेकिन वह हमारी तरह दहशत में नहीं है। कैसे?

हमें मालूम है कि चीन को भारी मात्रा में कच्चा तेल और थोड़ी गैस रूस से जमीनी पाइपलाइन से मिलती है। लेकिन क्या यह उसके लिए पर्याप्त है? यहां हम खाद को लेकर परेशान हैं, क्योंकि खरीफ फसल की बुआई शुरू होने वाली है। लेकिन चीन बेफिक्र है- न केवल अपनी जरूरतों, बल्कि निर्यात के अपने सौदों को लेकर भी।

हम खाद के लिए चीन से आयात पर भी निर्भर हैं। जब पूर्वी लद्दाख और गलवान में संकट की स्थिति बनी थी तब हमें खाद की कमी से जूझना पड़ा था। लेकिन चीन ने अभी अप्रत्याशित स्थिति को कारण बताकर खाद के अपने निर्यात से इनकार नहीं किया है। वास्तविकता ने मुझे सदमे में डाल दिया। सदमा चीन की कामयाबी को लेकर भी था और हमारे चलताऊ रवैये को लेकर भी।

चीन के पास गैस फील्ड कम ही हैं लेकिन गैस पर्याप्त है। इसकी वजह यह है कि चीन ने कोयले से गैस बनाने में पूंजी, हुनर और टेक्नोलॉजी का धैर्य के साथ निवेश किया। इस आइडिया पर भारत और चीन ने एक ही साथ विचार शुरू किया था, लेकिन आज चीन 80 मिलियन मीट्रिक टन प्रतिवर्ष (एमएमटीपीए) गैस का उत्पादन कर रहा है और हम इसका मात्र 3-5 फीसदी ही कर रहे हैं। चीन गैस उत्पादन के लिए 340 एमएमटीपीए कोयले का इस्तेमाल कर रहा है, जबकि भारत इसका मात्र 1.4 प्रतिशत कोयला इस्तेमाल कर रहा है।

यूपीए सरकार ने 2007 में कोयले से मीथेन गैस बनाने की बड़ी-बड़ी बातें की थीं और रानीगंज में एक छोटा-सा पायलट संयंत्र भी बनवाया था। उसके बाद इस आइडिया को भुला दिया गया। वैसे भी, यूपीए सरकार के दौरान कोयला काफी बदनाम हुआ था।

कोविड के बाद सुधारों की जो झड़ी लगी, उसमें 2020 में मोदी सरकार ने नेशनल कोल गैसीफिकेशन मिशन का शुभारंभ किया। उस योजना के तहत 2030 तक 100 एमएमटीपीए कोयले के इस्तेमाल से गैस उत्पादन का लक्ष्य तय किया गया था।

इस योजना में चार लाख करोड़ रुपये का निवेश किया जाना था। 100 एमएमटीपीए पर हमारा कोयला गैस (जिसे सिंथेटिक या सिनगैस भी कहा जाता है) उत्पादन चीन के उत्पादन से 25 फीसदी ज्यादा होता।

आज हम इस दस वर्षीय योजना के छठे साल में हैं और कुल उत्पादन 5 एमएमटीपीए ही है (अच्छे उत्पादन वाले साल में)। इसमें से 1.8 एमएमटीपीए का उत्पादन ओडिशा के अंगुल में जिंदल स्टील एंड पावर प्लांट में होता है, जिसमें नई आधुनिक प्रक्रिया का इस्तेमाल किया जा रहा है और यह ज्यादातर आंतरिक खपत के लिए है।

इसके अलावा, कोयला मंत्रालय और नीति आयोग की वेबसाइटें बताती हैं कि कोयले से गैस उत्पादन की सात परियोजनाओं के लिए 64,000 करोड़ के निवेश की मंजूरी दी जा चुकी है। लगभग ये सारी परियोजनाएं सार्वजनिक क्षेत्र

में कोल इंडिया लिमिटेड के साथ संयुक्त उपक्रम के रूप में लागू होंगी, लेकिन फिलहाल ये नियमन वाले चक्र में चक्कर लगा रही हैं।

मैंने झारखंड के जामताड़ा के कस्टा में 'ईस्टर्न कोलफील्ड्स' (कोल इंडिया की सहायक कंपनी) की भूमिगत कोल गैसीफिकेशन परियोजना के बारे में पढ़ा। इसे अब तक उत्पादन शुरू कर देना चाहिए था। लेकिन यह कोयला और पर्यावरण मंत्रालयों के बीच विवाद में उलझकर रह गई है।

पर्यावरण मंत्रालय जोर दे रहा है कि परियोजना को जमीन के 300 मीटर नीचे होना चाहिए। कोयला मंत्रालय 150-160 मीटर नीचे लगाना चाहता है। नतीजा वही पुरानी कहानी। हमने कोयला निकासी भी खुली खदानों तक सीमित कर रखी है। हमारा पूरा भूमिगत कोयला यूं ही पड़ा हुआ है, जबकि चीन जमीन के अंदर तीन किमी तक जाकर कोयले की निकासी कर रहा है।

कोयला मंत्रालय की वेबसाइट पर दो अच्छी चीजें पढ़ने को मिलीं, जो निजी कंपनी समूहों अदाणी और जिंदल की ओर से डाली गई थीं। वे याद दिलाती हैं कि भारत के पास दुनिया में कोयले का पांचवां सबसे बड़ा भंडार है।

वे फ्लो-चार्टों के जरिए टेक्निकल प्रक्रिया को स्पष्ट करती हैं और बताती हैं कि क्या सुधार किए जा सकते हैं और क्या संसाधन चाहिए। वे इन दिनों प्रचलित 'एनर्जी आत्मनिर्भरता' समेत दूसरे लाभ भी गिनाती हैं।

दूरदर्शिता के मामले में हम चीन से पीछे नहीं हैं। लेकिन चीन के विपरीत हम कथनी को करनी में बदलने में पीछे रह जाते हैं। यह हमारी ही फितरत नहीं है। दुनिया में कोयले के सातवें सबसे बड़े और उच्च स्तर वाले भंडार वाला इंडोनेशिया भी फिसड्डी रहा है। वह भी कोयले से गैस बनाने की दिशा में बढ़ ही रहा है।

चीन ने काफी पहले समझ लिया था कि तेल के मामले में झटके लगते रहेंगे। अमेरिका अपने फायदे के लिए प्रतिबंधों का इस्तेमाल करता रहेगा। इसलिए उसने उस चीज में निवेश करने का फैसला किया, जो उसके कब्जे में है और उसने बाजार की उथल-पुथल की परवाह न करते हुए उस राह पर चलना जारी रखा।

हाइड्रोकार्बन में गिरावट के दौरान भी उसने अपना रास्ता नहीं छोड़ा। उसे कोयले को राष्ट्रीय रणनीतिक लक्ष्य बनाना एनर्जी के मामले में आजादी हासिल करने का मंत्र लगा और उसने यह किया। हम मीनमेख में उलझे रहे। डाइअमोनियम फास्फेट के लिए अमोनिया जरूरी है।

भारत इसका अधिकांश भाग आयात करता है। इसकी इतनी कमी है कि हताश किसान इसके लिए दंगा और लूटपाट न कर बैठें, इससे बचने के लिए कई राज्यों ने इसकी सप्लाई को पुलिस थानों में जमा करना शुरू किया है। इसे किसानों की भूमि के रिकॉर्ड और आधार कार्ड पर आधारित रजिस्ट्रेशन के हिसाब से आवंटित किया जाता है।

चीन पूरी दुनिया की जरूरत के यूरिया का 40 फीसदी हिस्सा कोयले से हासिल की जाने वाली सिंथेटिक गैस से उत्पादित करता है। इसके अलावा वह पूरी दुनिया की जरूरत के मिथानोल का 54 फीसदी हिस्सा उत्पादित करता है, जिसका करीब 70 फीसदी भाग कोयले से हासिल किया जाता है। इस सबमें हम कहां खड़े हैं?

उस चीज में निवेश किया, जो चीन के पास मौजूद थी... चीन ने काफी पहले ही समझ लिया था कि तेल के मामले में झटके लगते रहेंगे। अमेरिका अपने फायदे के लिए प्रतिबंधों का इस्तेमाल करता रहेगा। इसलिए उसने उस चीज में निवेश करने का फैसला किया, जो उसके कब्जे में है और बाजार की उथल-पुथल की परवाह नहीं की।

Date: 08-04-26

भारत में दुनिया की इनोवेशन- राजधानी बनने की क्षमता है

शशि थरूर, (पूर्व केंद्रीय मंत्री और सांसद)

भारत को लंबे समय तक अंतरराष्ट्रीय व्यवसायों के लिए एक कम-लागत वाले बैक-ऑफिस के रूप में प्रस्तुत किया जाता रहा था। आज के संदर्भ में यह गलत साबित हो चुका है। भारत अब इंवेंशन, प्रोडक्ट-डेवलपमेंट और तकनीकी महत्वाकांक्षा के सबसे महत्वपूर्ण केंद्रों में से एक के रूप में उभर रहा है।

भारत पहले ही उस स्थान के रूप में एक केंद्रीय भूमिका हासिल कर चुका है, जहां वैश्विक कंपनियां अपने उत्पाद विकसित करती हैं, लचीलापन बढ़ाती हैं और अपनी महत्वपूर्ण प्रणालियों का विस्तार करती हैं।

इस कहानी की शुरुआत ग्लोबल कैपेबिलिटी सेंटर्स (जीसीसी) के उदय से होती है, जिन्हें बहुराष्ट्रीय कंपनियों ने दो दशक पहले स्थापित करना शुरू किया था। उनके कारण स्पष्ट थे- दक्षता बढ़ाना और लागत कम करना।

अपने बड़े, शिक्षित और अंग्रेजी-भाषी वर्कफोर्स के कारण भारत जीसीसी का एक स्वाभाविक केंद्र बन गया। यहां भारतीय कर्मचारी दुनिया भर की कंपनियों के लिए नियमित आईटी कार्य और व्यावसायिक प्रक्रियाओं का संचालन करते थे।

लेकिन भारतीय वर्कफोर्स की क्षमता इससे कहीं अधिक थी, इसलिए कंपनियों ने अधिक जटिल कार्य- जैसे एनालिटिक्स, समस्या-समाधान, साझा सेवाएं भी स्थानांतरित करने शुरू कर दिए। धीरे-धीरे जीसीसी केवल सहायक इकाइयां नहीं रहे; वे अब रणनीति बना रहे थे, परियोजनाएं डिजाइन कर रहे थे और बौद्धिक संपदा का सृजन कर रहे थे।

आज भारत-आधारित जीसीसी की पहचान एंड-टु-एंड स्वामित्व से होती है, जहां भारतीय टीमें परिकल्पना से लेकर निर्माण, परीक्षण और डिप्लॉयमेंट तक हर चरण का नेतृत्व करती हैं। भारत में अब 1,800 से अधिक जीसीसी हैं, जिनमें लगभग 20 लाख पेशेवर इंजीनियरिंग, फाइनेंस, लीगल, डिजाइन और रिसर्च जैसे क्षेत्रों में कार्यरत हैं।

यह नेटवर्क एक शक्तिशाली इनोवेशन-चक्र तैयार करता है। आज यह स्थिति बन गई है कि सिलिकॉन वैली में जिस प्रोडक्ट की कल्पना की गई हो, उसे बेंगलुरु में विकसित किया गया हो, हैदराबाद में उसका परीक्षण किया गया हो, पुणे में उसे सुरक्षित रखा गया हो और कुछ ही दिनों में उसे वैश्विक स्तर पर डिप्लॉई किया जा सकता है। कम लागत का लाभ तो अब भी मौजूद है, लेकिन अब उससे भी बढ़कर जो चीज हो गई है, वह है इस सबकी स्पीड से मिलने वाला एडवांटेज।

और यह सब गुणवत्ता से समझौता किए बिना हो रहा है। दुनिया की कुछ सबसे उन्नत एआई प्रयोगशालाएं और महत्वाकांक्षी सेमीकंडक्टर-डिजाइन टीमें आज भारत में स्थित हैं। भारत के लगभग 60% जीसीसी आज एजेंटिक एआई में भारी निवेश कर रहे हैं।

ये मुख्य एंटरप्राइज़ प्रणालियां हैं। गोल्डमैन साक्स बेंगलुरु से लेकर वॉलमार्ट ग्लोबल टेक इंडिया तक, कई कंपनियों के भारत स्थित शैडो मुख्यालय आज उनके अधिकृत मुख्यालयों से भी अधिक तकनीकी गहराई रखते हैं।

वास्तव में भारत का यह जीसीसी-बूम 1991 में अर्थव्यवस्था के उदारीकरण के बाद से सबसे परिवर्तनकारी आर्थिक विकासों में से एक है। इसने पेशेवरों का एक नया वर्ग तैयार किया है, जिनका कार्य बौद्धिक रूप से चुनौतीपूर्ण है, जो पारंपरिक सेवा-क्षेत्र की नौकरियों की तुलना में कहीं अधिक वेतन प्रदान करता है और वैश्विक नेतृत्व तक पहुंच के रास्ते खोलता है।

इसका प्रभाव केवल टियर-1 शहरों तक सीमित नहीं है। टियर-2 और टियर-3 शहर- जैसे कोयम्बटूर, इन्दौर, कोच्चि, जयपुर, भुबनेश्वर, त्रिवेंद्रम आदि भी हाई-वैल्यू वर्क के केंद्र के रूप में उभर रहे हैं।

इससे महानगरों पर दबाव कम होता है, साथ ही स्थानीय रियल एस्टेट बाजार, खुदरा अर्थव्यवस्था और बुनियादी ढांचे में निवेश को भी प्रोत्साहन मिलता है। परिणामस्वरूप, भारत का आर्थिक मानचित्र अधिक संतुलित बन रहा है।

आज यह स्थिति है कि सिलिकॉन वैली में जिस प्रोडक्ट की कल्पना की गई हो, उसे बेंगलुरु में विकसित किया गया हो, हैदराबाद में उसका परीक्षण किया गया हो, पुणे में उसे सुरक्षित रखा गया हो और कुछ ही दिनों में उसे वैश्विक स्तर पर डिप्लॉई किया जा सकता है।

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date: 08-04-26

आयात निर्भरता में कमी

संपादकीय

केंद्रीय वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण ने सोमवार को पश्चिम एशिया में छिड़े संघर्ष को उचित ही 'व्यवस्थागत झटका' करार दिया और कहा कि यह वैश्विक ऊर्जा के महत्त्वपूर्ण मार्गों को खतरे में डाल रहा है। यह बात भारत की नाजुकता को भी रेखांकित करती है। भारत कच्चे तेल की अपनी खपत आवश्यकता का 85 फीसदी आयात करता है। इसका बड़ा हिस्सा पश्चिम एशिया से ही आता है और यह क्षेत्र भू-राजनीतिक अनिश्चितता को लेकर बहुत अधिक

संवेदनशील है।

भू-राजनीतिक उथलपुथल मचते ही आयात की लागत अचानक बढ़ जाती है, मुद्रास्फीति का दबाव उत्पन्न हो जाता है और उद्योग जगत के लिए भी हालात अनिश्चित हो जाते हैं। जैसा कि वर्तमान संकट दर्शाता है, बात केवल कीमतों की नहीं बल्कि उपलब्धता की भी है जिस पर गहरा असर पड़ सकता है।

ऊर्जा कीमतों और आयात बिल में तेज इजाफा वृहद आर्थिक स्थिरता को प्रभावित कर सकता है। अतीत में कई अवसरों पर हम ऐसा होते देख चुके हैं। ऐसे में निरंतर भू-राजनीतिक उथलपुथल वाली दुनिया में अपने दीर्घकालिक हितों को सुरक्षित करने के लिए भारत को ऊर्जा आयात पर अपनी निर्भरता कम करनी होगी।

इसे हासिल करने के लिए अलग-अलग मोर्चों पर एक साथ काम करना होगा। यह दलील दी गई कि भारत को जीवाश्म ईंधन का घरेलू उत्पादन बढ़ाना होगा और इसके साथ ही उसे तेल एवं गैस आयात के स्रोतों में विविधता लानी होगी। हालांकि, इस चरण में भारत को नवीकरणीय ऊर्जा की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण प्रोत्साहन की भी आवश्यकता है। रिपोर्टों में कहा गया है कि कई कारोबार गैस की अनुपलब्धता के कारण आंशिक या पूर्ण रूप से उत्पादन बंद कर चुके हैं।

यह जानना उपयोगी होगा कि क्या उनमें से कुछ अपनी ऊर्जा आवश्यकताओं को बिजली पर स्थानांतरित कर सकते हैं। ऐसे बदलाव, संभवतः राज्य की मदद से, मांग का एक स्थिर स्रोत बना सकते हैं। विश्वसनीय औद्योगिक सुधार नवीकरणीय क्षमता के उपयोग में सुधार कर सकता है, निजी निवेश आकर्षित कर सकता है और भंडारण जैसी सहायक अधोसंरचना के विकास को तेज कर सकता है।

अंतरराष्ट्रीय नवीकरणीय ऊर्जा एजेंसी के हालिया आंकड़े बताते हैं कि भारत अब दुनिया का तीसरा सबसे बड़ा नवीकरणीय ऊर्जा बाजार है। हालांकि, कुल ऊर्जा मिश्रण में नवीकरणीय ऊर्जा का योगदान अभी भी बहुत कम है और इसे पर्याप्त रूप से बढ़ाने की आवश्यकता है।

यह पहलू रोजगार निर्माण की दृष्टि से भी बेहतर है। अंतरराष्ट्रीय शोध संस्था 'इक्रियर' के लिए भारतीय परिषद के एक अध्ययन ने दिखाया कि स्वच्छ ऊर्जा से संबंधित रोजगार 2021-22 के 3.1 लाख से बढ़कर 2029-30 तक 9 लाख हो सकते हैं जबकि ऊर्जा किफायत से संबंधित रोजगार 12.6 लाख से बढ़कर 42.8 लाख हो सकते हैं।

इसका तात्पर्य यह है कि अगर भारत अपने 2030 के लक्ष्य यानी 500 गीगावॉट गैर-जीवाश्म क्षमता और 15 करोड़ टन ऊर्जा बचत हासिल करता है, तो रोजगार में लगभग तीन गुना वृद्धि होगी। ये लाभ और भी अधिक हो सकते हैं यदि भारत नवीकरणीय ऊर्जा क्षेत्र में अपनी महत्त्वाकांक्षा को काफी बढ़ाए। इस वृद्धि को मुख्य रूप से सौर ऊर्जा आगे बढ़ाएगी, साथ ही कुशल रखरखाव भूमिकाओं की बढ़ती मांग भी होगी। हालांकि ये लाभ स्वतः नहीं मिलेंगे।

इसके अलावा, यह ध्यान रखना चाहिए कि नवीकरणीय ऊर्जा की ओर बदलाव के लिए विभिन्न स्तरों पर सुधार और निवेश की आवश्यकता होगी। नवीकरणीय ऊर्जा के बहुत अधिक स्तर को समायोजित करने के लिए ग्रिड आधुनिकीकरण में बड़े निवेश की आवश्यकता होगी। वितरण चरण में भी सुधार आवश्यक होंगे। बिजली वितरण कंपनियों को अक्सर इस क्षेत्र की सबसे कमजोर कड़ी माना जाता है।

मूल्य निर्धारण नीति, जो कुछ उपभोक्ताओं को सब्सिडी देने के लिए व्यवसायों से अधिक शुल्क लेती है, काफी तनाव पैदा करती है और उद्यमों को वैकल्पिक ऊर्जा स्रोतों की ओर धकेलती है। भारत को इस क्षेत्र में सुधार शुरू करना चाहिए।

नवीकरणीय ऊर्जा के लिए एक ठोस प्रोत्साहन न केवल पर्यावरणीय चिंताओं का समाधान कर सकता है बल्कि भारत की ऊर्जा आयात पर निर्भरता को कुछ हद तक कम भी कर सकता है। इसलिए, नवीकरणीय ऊर्जा को बहुआयामी रणनीति का एक महत्त्वपूर्ण हिस्सा होना चाहिए।

Date: 08-04-26

ऊर्जा क्षेत्र की कमजोरियों को दूर करने की जरूरत

अजय शाह, (लेखक एक्सकेडीआर फोरम में शोधकर्ता हैं।)

दुनिया में जो माहौल है उसने हमें घरेलू कमजोरियों के बारे में नए सिरे से चिंतित किया है। इजरायल-अमेरिका और ईरान के बीच छिड़े सैन्य संघर्ष ने ऊर्जा बाजार में उथलपुथल पैदा की है और जोखिम की गणना को बदल दिया है। भारत की बात करें तो तेल कीमतों के कारण लग रहे झटकों के वृहद आर्थिक प्रभाव 1970 के दशक के आरंभ से ही दिक्कतदेह बने रहे हैं। ढांचागत कमजोरी को आंकड़ों में ही महसूस किया जा सकता है।

देश की कुल ऊर्जा आपूर्ति में आयातित कच्चे तेल की हिस्सेदारी 21.7 फीसदी है। आयातित प्राकृतिक गैस अतिरिक्त 2.6 फीसदी है। ये मिलकर 24.3 फीसदी का जोखिम बनाते हैं। भारत के रणनीतिक लेखन ने लंबे समय से इस निर्भरता के जोखिमों का दस्तावेजीकरण किया है, खासकर एक राजनीतिक रूप से अस्थिर क्षेत्र पर। इसका एक जवाब यह है कि हम भाग्यशाली हैं, भारतीय भूभाग को प्रचुर मात्रा में सौर ऊर्जा प्राप्त है। नवीकरणीय ऊर्जा की आधुनिक तकनीकें ऊर्जा स्वतंत्रता की नींव प्रदान करती हैं।

इस सफर में हम कहां हैं? बीते एक दशक में देश में आधुनिक नवीकरणीय ऊर्जा उत्पादन में सालाना आधार पर 8 फीसदी वृद्धि हुई। एक दशक में 8 फीसदी वृद्धि के साथ विशुद्ध उत्पादन में जबरदस्त इजाफा होगा। परंतु इसके बावजूद हम बहुत अच्छी हालत में नहीं हैं। आधुनिक नवीकरणीय ऊर्जा कुल ऊर्जा आपूर्ति का केवल 3.2 फीसदी है। यानी हमारी दशकों की ऊर्जा नीति की उपलब्धि एक ही अंक में सिमट जाती है।

आधुनिक आर्थिक वृद्धि ऊर्जा-गहन होती है। सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) का विस्तार ऊर्जा आपूर्ति में समानुपाती विस्तार की मांग करता है। जनसांख्यिकी, शहरीकरण और औद्योगीकरण यह सुनिश्चित करते हैं कि ऊर्जा की मांग बढ़ेगी। इस आपूर्ति की संरचना में एक संरचनात्मक परिवर्तन होना आवश्यक है। वर्तमान में, पारंपरिक बायोमास कुल ऊर्जा आपूर्ति का 20 फीसदी है। आर्थिक आधुनिकीकरण का अर्थ है बायोमास का विस्थापन। इसमें औद्योगिक प्रक्रियाओं, परिवहन लॉजिस्टिक्स और घरेलू खपत का गहन विद्युतीकरण शामिल है। वृहद आर्थिक प्रोफाइल को बदलने और ऊर्जा सुरक्षा प्राप्त करने के लिए, नवीकरणीय ऊर्जा की भूमिका क्रमिक रूप से नहीं बढ़ सकती। प्रणाली को परिमाणात्मक

विस्तार की आवश्यकता है। प्रश्न यह है कि कुल ऊर्जा आपूर्ति में नवीकरणीय ऊर्जा को 32 फीसदी तक कैसे पहुंचाया जाए?

हमें 3.2 फीसदी हिस्सेदारी तक पहुंचने में दो दशक का वक्त लगा। तो वर्तमान ढांचे में यह जल्दी 32 फीसदी तक नहीं पहुंचेगा। इसके लिए ऊर्जा नीति में बुनियादी बदलाव आवश्यक हैं। सब्सिडी में क्रमिक समायोजन या सार्वजनिक क्षेत्र के आदेश इस अंतर को नहीं भर पाएंगे। पूंजी जुटाने और प्रोत्साहनों को सुसंगत करने के लिए तीन संरचनात्मक बदलाव आवश्यक हैं।

पहला तत्व है बिजली क्षेत्र में परिवर्तन। वर्तमान ढांचा केंद्रीय योजना पर आधारित है। सरकार की संस्थाएं खरीद की योजना बनाती हैं, मात्रा तय करती हैं और कीमतों का प्रबंधन करती हैं। यह संस्थागत व्यवस्था पूंजी का गलत आवंटन करती है, जोखिम उठाने से रोकती है और नवाचार को हतोत्साहित करती है। केंद्रीय योजना आधुनिक, विकेंद्रीकृत ग्रिड की जटिलता को नहीं समझ सकती, जो अस्थिर नवीकरणीय स्रोतों से संचालित होता है। प्रणाली को मूल्य तंत्र की ओर स्थानांतरित होना चाहिए। बिजली बाजारों की संरचना ऐसी होनी चाहिए कि कीमतें वास्तविक समय में आपूर्ति और मांग के आधार पर तय हों।

बाजार कीमत और लाभ दरें वे तंत्र हैं जो आर्थिक गतिविधि को सही ढंग से संगठित करते हैं। जब मूल्य प्रणाली काम करती है, तो यह नवीकरणीय ऊर्जा उत्पादन, प्रसारण अधोसंरचना और ऊर्जा भंडारण में निजी निवेश को आकर्षित करती है। पूंजी उन समाधानों की ओर प्रवाहित होती है जो ग्रिड की बाधाओं को दूर करते हैं। केंद्रीय योजनाकार सही तकनीकों का राजनीतिक-अफसरशाही चयन करने की कोशिश करते हैं। बाजार जोखिम उठाते हैं और सबसे कम लागत वाले समाधान खोजते हैं। राज्य को वह बाजार ढांचा बनाना चाहिए जिसके भीतर लाखों निजी एजेंट बिना बाधा वाले मूल्य संकेतों के आधार पर अपनी ऊर्जा उत्पादन और खपत के निर्णयों का अनुकूलन कर सकें।

दूसरा तत्व बाह्यताओं पर कराधान से जुड़ा है। ऊर्जा विकल्पों में छिपी हुई लागतें होती हैं। जीवाश्म ईंधन का दहन सार्वजनिक स्वास्थ्य को नुकसान पहुंचाता है, जलवायु परिवर्तन में योगदान देता है और तेल और गैस आयात के माध्यम से देश के लिए एक रणनीतिक कमजोरी पैदा करता है, खासकर अस्थिर क्षेत्र से। भारत के लिए कार्बन कर सबसे उपयुक्त हस्तक्षेप है। यह कार्बन उत्सर्जन के लिए एक मूल्य तय करता है, जिससे पूरी अर्थव्यवस्था में सापेक्ष कीमतें बदलकर अशुद्ध ईंधनों से दूर हो जाती हैं।

जब कार्बन-गहन गतिविधियां महंगी हो जाती हैं, तो निजी कंपनियां अपनी आपूर्ति श्रृंखलाओं को समायोजित करती हैं। पूंजी ऊर्जा दक्षता और नवीकरणीय विकल्पों की ओर पुनः आवंटित होती है। कार्बन टैक्स ऊर्जा बदलाव को आगे बढ़ाने के लिए लाभ प्रेरणा का उपयोग करता है। भारतीय अर्थव्यवस्था पर पहले से ही भारी कर लगाया जाता है और कोई भी अधिक कर नहीं चाहता।

आगे का रास्ता अप्रत्यक्ष करों के राजस्व-तटस्थ सुधार में निहित है। वर्तमान माल एवं सेवा कर (जीएसटी) में विविध और ऊंची दरें तथा जटिल वर्गीकरण शामिल हैं। यह संरचना अनुपालन लागत वाली है और संसाधन आवंटन को विकृत करती है। कार्बन टैक्स से प्राप्त राजस्व लंबे समय से लंबित सुधार को वित्तपोषित कर सकता है, यानी कम और एकल दर वाले जीएसटी की ओर बढ़ना।

तीसरा तत्व है वित्त। नवीकरणीय ऊर्जा पूंजी-गहन है। परियोजनाओं की व्यवहार्यता कम लागत वाली इक्विटी और दीर्घकालिक ऋण तक पहुंच पर निर्भर करती है। नवीकरणीय ऊर्जा हिस्सेदारी में 10 गुना वृद्धि के लिए भारी पूंजी निर्माण की आवश्यकता है। अधोसंरचना निर्माण में उत्पादन और भंडारण क्षमता, ग्रिड विस्तार और भंडारण तकनीकें शामिल हैं। मांग पक्ष पर भी बड़े निवेश की आवश्यकता है, जैसे विद्युत गतिशीलता की ओर बदलाव। भारतीय राज्य के बहीखाते में इस विस्तार को वित्तपोषित करने की क्षमता नहीं है। घरेलू वित्तीय प्रणाली भी इसी तरह सीमित है। संसाधन आवश्यकता घरेलू बचत से अधिक है।

इसका समाधान भारतीय अधोसंरचना जरूरतों को वैश्विक पूंजी बाजारों से जोड़ने में शामिल है। पूंजी के सीमा-पार आवागमन में बाधा वित्तपोषण की लागत को बढ़ा देती है। नियामक दिक्कतें और हेजिंग लागत प्रत्यक्ष विदेशी निवेश और विदेशी पोर्टफोलियो निवेश को हतोत्साहित करती हैं। ऊर्जा बदलाव के लिए वित्तीय उदारीकरण आवश्यक है। पूंजी प्रवाह पर बाधा हटाने से वैश्विक बचत भारतीय स्वच्छ ऊर्जा परियोजनाओं में प्रवेश कर सकती है, जिससे परियोजना वित्त का गणित बदल जाता है।

भू-राजनीतिक टकराव हमारी आर्थिक वास्तविकता को स्पष्ट करने में मदद करता है। आयातित जीवाश्म ईंधनों पर निर्भरता भारतीय स्थिरता में एक बाधा है। इस बाधा से बाहर निकलने के लिए उन तरीकों को छोड़ना आवश्यक है जिन्होंने इसे पैदा किया। नवीकरणीय ऊर्जा की 3.2 फीसदी हिस्सेदारी केंद्रीय योजना, बिना तय मूल्य वाली बाहयताओं और पूंजी नियंत्रणों का उत्पाद है। वांछित 32 फीसदी हिस्सेदारी तक पहुंचने के लिए हमें दिशा बदलनी होगी। इसके लिए मूल्य प्रणाली पर आधारित बिजली व्यवस्था, कार्बन टैक्स और पूंजी खाते की परिवर्तनीयता आवश्यक है।

Live हिन्दुस्तान.com

Date: 08-04-26

तलाक अब छिपाने की बात नहीं

क्षमा शर्मा

हाल ही में उत्तर प्रदेश के मेरठ शहर में एक अनोखी घटना देखने को मिली। यहां के रिटायर्ड जज ज्ञानेंद्र शर्मा की बेटी का विवाह साल 2018 में हुआ था। खबर के मुताबिक, विवाह के बाद से ही बेटी प्रणिता को परेशान किया जाने लगा था। अंततः उसने तलाक के लिए आवेदन किया। इसी 3 अप्रैल को तलाक मंजूर हुआ, तो प्रणिता को फूल-मालाएं पहनाई गई। अदालत से अपने घर तक का रास्ता उसने ढोल बजाते, खुशी मनाते तय किया । बकौल प्रणिता 'परिवार से पूरा समर्थन मिला, जिससे लड़ने की ताकत मिली। तमाम लड़कियों से कहूंगी कि कोई परेशान करे, तो चुप न रहें।' प्रणिता के पिता ने कहा कि मेरी बेटी शादी से दुखी थी, तो उसे खुशियां देना मेरा

दायित्व था। वहढोल-नगाड़ों के बीच विदा हुई थी। आज उसे उसी सम्मान के साथ वापस लेकर आया हूं। कोई मुआवजा भी नहीं लिया।'

कुछ साल पहले मध्य प्रदेश में भी एक पिता बेटी के ससुराल बैंड-बाजा लेकर गए। उन्होंने भी यही कहा था कि जिस तरह से बेटी को घर से विदा किया, उसी तरह से वापस ले जा रहा हूं। यह समाज को संदेश है कि यदि शादी न चले, तो यह शर्म की बात नहीं है, न ही किसी से छिपाने की, बल्कि सभी को सूचना देने की है कि हमारी लड़की का एक खराब रिश्ता खत्म हो चुका है।

हमारे समाज की यह समस्या है कि कोई शादी अगर न चले, तो उसकी पूरी जिम्मेदारी लड़की पर डाल दी जाती है। अक्सर सुनने को मिलता है कि जरूर लड़की ने ही कुछ ऐसा किया होगा, जिससे रिश्ता नहीं चला। यही कारण है कि बहुत सी स्त्रियां, हजार मुश्किलें और अपमान झेलते हुए, कभी बच्चों के नाम पर, तो कभी समाज में उपहास के डर से अपने रिश्ते को बचाए रखना चाहती हैं। इसके लिए वे तमाम तरह के दुर्व्यवहार, हिंसा और लांछन को झेलती हैं। इनमें दहेज की मांग को पूरा न होने के कारण होने वाली हिंसा भी शामिल है। दूसरों को छोड़िए, अधिकांश मामलों में लड़की के परिवार वाले ही उसे यह सलाह देते हैं कि जैसे भी हो, निभा लो। यह सच है कि लड़कियां बदल गई हैं। वे पढ़- लिख गई हैं। बहुत सी बेटियां आत्मनिर्भर भी हैं, लेकिन तब भी वे बहुत सी कठिनाइयों को झेलने के लिए अभिशप्त हैं।

ऐसे में, मेरठ या मध्य प्रदेश की घटनाएं, माता- पिता की सोच में क्रांतिकारी बदलाव को दिखा रही हैं। माता-पिता अब नहीं चाहते कि किसी रिश्ते को चलाने और निभाने के नाम पर बेटी पूरी जिंदगी नरक भोगे । अनेक अध्ययन और रिपोर्टें बता रही हैं कि समाज में तलाक बढ़ रहे हैं। हालांकि, अब भी ये पश्चिमी देशों के मुकाबले बहुत कम हैं। ये एक से 1.1 प्रतिशत हैं। इतनी कम संख्या होने के बावजूद पिछले दो दशकों में तलाक की घटनाएं 50 फीसदी बढ़ गई हैं। गौर कीजिए, यही वे दो दशक हैं, जिनमें भारत ने मध्यवर्ग के तेज उभार और उसकी सोच को बदलते हुए देखा है।

अपने देश में कम तलाक होने का बड़ा कारण समाज का वह दबाव भी है, जो इसे ठीक नहीं मानता। यदि लोगों की बातचीत पर गौर करें, तो हर जगह यह सुनाई पड़ जाएगा कि 'अमुक को उसके पति ने छोड़ दिया।' जैसे कि पति को ही केवल यह अधिकार है कि वह पत्नी को छोड़ दे। 'जरूर लड़की में ही कमी रही होगी।' लड़कियों के तलाक न लेने का एक बड़ा कारण उनका आर्थिक रूप से सक्षम न होना, अपने परिवार का साथ न मिलना और लंबी कानूनी प्रकिया भी है।

अब स्थिति बदल रही है। बड़ी संख्या में लोग बिना तलाक लिए भी अलग-अलग रह रहे हैं। अलग रहने वालों की संख्या, छोटे शहरों और गांवों में अधिक है। जगह-जगह परिवार अदालतों की शुरुआत इस ओर संकेत कर रही है कि लड़कियां बदल रही हैं। आज 58 प्रतिशत लड़कियां तलाक की पहल कर रही हैं। एक तरफ यह चौंकाने वाला तथ्य है, तो दूसरी ओर यह एहसास कराने वाला भी कि लड़कियां जुल्म सहने से इनकार करने लगी हैं।

साल 2011 की जनगणना के अनुसार, दक्षिण भारत में उत्तर भारत के मुकाबले अधिक तलाक होते हैं। उत्तर के मुकाबले वहां स्त्रियां अधिक स्वायत्त और कामकाजी हैं। उत्तर भारत में यह सामाजिक शर्म अधिक है। यह भी एक तथ्य है कि अधिकांश मामलों में जब तक स्त्रियां सहती रहती हैं, विवाह चलता रहता है। तलाक के कारणों में घरेलू हिंसा, पत्नी का अधिक पैसे कमाना, पत्नी से अधिक से अधिक की मांग या पति का नपुंसक होना या विवाहेतर संबंध भी हैं। भारत में महाराष्ट्र में सबसे अधिक 18.7 प्रतिशत, कर्नाटक में 11.7 फीसदी, उत्तर प्रदेश में 8.8 प्रतिशत, पश्चिम बंगाल में 8.2

फीसदी, दिल्ली में 7.7 प्रतिशत, तमिलनाडु में 7.1 प्रतिशत, तेलंगाना में 6.7 फीसदी और केरल में 6.3 प्रतिशत तलाक के मामले दर्ज किए गए हैं। कामकाजी जोड़ों में अधिक तलाक का होना भी स्त्री सशक्तीकरण को दर्शाता है।

पिछले दिनों अदालतों के एकाधिक ऐसे फैसले आए हैं, जिनमें कहा गया कि शादीशुदा स्त्री या पुरुष का बिना तलाक लिए लिव-इन में रहना अपराध नहीं है। एक जमाने में 'एडल्टरी' को अपराध माना जाता था, लेकिन अब वह अपराध नहीं है! हां, ऐसा रिश्ता तलाक का आधार बन सकता है। सबसे गौर करने लायक बात यह है कि अब छोटे शहरों और गांवों में भी तलाक की घटनाएं बढ़ रही हैं। ऐसी घटनाएं भी सामने आ रही हैं, जहां वृद्धावस्था में लोग अलग हो रहे हैं। अब तो कई स्त्रियां तलाक के बाद 'ब्रेकअप पार्टी' भी देती हैं। सूचना-क्रांति ने लड़कियों के लिए दुनिया के दरवाजे खोल दिए हैं। टीवी, इंटरनेट, सोशल मीडिया, अखबारों तक उनकी पहुंच है। उनमें बराबरी की भावना और जागरूकता बढ़ी है। अपनी खुशी और मानसिक स्वास्थ्य, किसी भी रिश्ते से बड़ा यह भावना भी उनमें नजर आती है। अब तो बाकायदा दूसरी शादी के लिए वैवाहिक विज्ञापन भी आने लगे हैं।

इसका एक पहलू यह भी है कि कई बार बहुत मामूली कारणों से तलाक के लिए मुकदमे किए जा रहे हैं हनीमून से लौटकर या विवाह के एक सप्ताह बाद ही तलाक के लिए आवेदन किए जा रहे हैं। जन्मदिन की मुबारकबाद क्यों नहीं दी या घुमाने नहीं ले गए अथवा पति दांत साफ नहीं करता, नहाता नहीं है, पत्नी के मुकाबले अपने परिवार को अधिक प्राथमिकता देता है, ऐसी शिकायतें भी तलाक के आवेदनों का आधार बन रही हैं। निस्संदेह, ये शिकायतें हास्यास्पद लगती हैं, लेकिन कुल मिलाकर इनसे यह तो परिलक्षित होता ही है कि समाज बदल रहा है।